शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

भारत में काष्ठ शिल्प का ऐतिहासिक विकास : एक सांस्कृतिक अध्ययन

डॉ. आलोक कुमार पाण्डेय
सह-प्राध्यापक (इतिहास)
श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

शोध सारांश

भारत में काष्ठ शिल्प का विकास एक समृद्ध और विविध इतिहास का हिस्सा है, जो विभिन्न कालखंडों और सांस्कृतिक परिवर्तनों के साथ विकसित हुआ है। भारत में काष्ठ शिल्प का ऐतिहासिक विकास एक लंबी और समृद्ध परंपरा का हिस्सा है। प्राचीन काल में वैदिक और हड़प्पा सभ्यता के दौरान लकड़ी का उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों और घरेलू उपकरणों में होता था। मध्यकाल में मौर्य, गुप्त, चालुक्य, और चोल राजवंशों के समय मंदिरों, महलों, और अन्य संरचनाओं में काष्ठ शिल्प की उत्कृष्ट नक्काशी देखने को मिलती है। औपनिवेशिक काल में काष्ठ शिल्प को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा, लेकिन स्वतंत्रता के बाद इसके संरक्षण और पुनरुद्धार के प्रयास हुए। आज, भारत के विभिन्न क्षेत्रों में काष्ठ शिल्प की विशिष्टताएँ और तकनीकें स्थानीय संस्कृति और परंपरा को प्रतिबिंबित करती हैं, और यह उद्योग रोजगार का एक महत्वपूर्ण स्रोत बना हुआ है।

कुंजीभूत शब्द

पूर्व पाषाण युगीन, समुन्नत जीवन, अनगढ़ टुकड़े, स्थापत्य विज्ञान, काष्ठ शिल्प, काष्ठ दंड।

मानव का काष्ठ से अटूट संबंध रहा है। जन्म से मृत्यु पर्यंत विविध रूपों में काष्ठ का उपयोग सर्वविदित है। मानव ने काष्ठ की उपयोगिता को समझ कर काष्ठ का उपयोग करना कब से प्रारंभ किया इस जानकारी के लिए पाषाण युगीन संस्कृति को देख लेना असंगत ना होगा। मनुष्य के अस्तित्व का आरंभ सुदूर अतीत के पाषाण युग से होता है। मानव विकास क्रम के आधार पर इस युग को पूर्व, मध्य और उत्तर तीन भागों में विभाजित किया गया है।

पूर्व पाषाण युगीन मनुष्य का जीवन प्रकृति पर आधारित था। कृषि तथा पशुपालन से वह सर्वथा अपरिचित था। आदिम मानव मुख्यतः फल, फूल, कंद, मूल, पशु, पक्षी, पहाड़, घाटी, नदी और जंगल आदि प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर था। वह प्रकृति जन्य पदार्थो से ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। उस समय पाषाण युगीन मानव के जीवन निर्वाह

शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

की सीमित आवश्यकताएं थीं। फिर भी उनकी प्राप्ति में उसे अनेक प्राकृतिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। सर्वप्रथम उसे आत्मरक्षा की चिंता हुई। प्रकृति के प्रकोपों और वन्य पशुओं के आक्रमणों से रक्षा के लिए मानव ने अपने आवास की व्यवस्था की। उसने नदियों की कगारों और पर्वतों की गुफाओं को अपनी शरण स्थल बनाया। क्योंकि वे स्थान सुरक्षित होने के साथ खान-पान की दृष्टि से भी सुलभ थे। आवास की व्यवस्था करने के बाद मानव को हथियारों और औजारों की भी आवश्यकता प्रतीत हुई। पशु पक्षी उसका प्रारंभिक आहार बने। वह छोटे पशुओं को पत्थर, भालों तथा लड़कियों से मार सकता था। किंतु बड़े हिंसक पशुओं का सामना करने के लिए उसे कारगर हथियारों की आवश्यकता थी। संकटमय स्थितियों से निपटने के लिए उसने पहले तो पत्थरों को तराश कर उन्ही से हथियारों का काम लिया। कुछ समय पश्चात उसने हड्डियों के हथियारों का भी निर्माण किया। यह हथियार आरंभ में यद्यपि बड़े असुविधाजनक थे किंतु धीरे-धीरे उसने उनके प्रयोग में लकड़ी का संयोग कर उन्हें अधिक सुविधाजनक तथा कारगर बनाया। इस प्रकार की अधिकतर सामग्री तो कल के अंतराल में नष्ट हो गई किंतु कुछ सामग्री शिवाला शिवालिक की पहाड़ियों उत्तर पश्चिमी पंजाब, पूछ और जम्मू आदि से प्राप्त हुई है विद्वानों ने इस सामग्री को पांच लाख वर्ष प्राचीन कहा है।[1]

पूर्व और मध्य युगों की अपेक्षा उत्तर पाषाण सभ्यता अनेक दृष्टि से उन्नत अवस्था में पहुंच चुकी थी। इस युग की विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि लोगों में कृषि कार्य के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया था। सभ्यता के उत्तरोत्तर विकास ने उत्तर पाषाण युगीन मनुष्य में नए निर्माण कार्यों की प्रेरणा एवं जिज्ञासा उत्पन्न की। पहले वह अपने शरीर की रक्षा के लिए वृक्ष छालों, पत्तों तथा चर्म को उपयोग में लाता था, किंतु अब वह बुने हुए वस्त्रों की उपयोगिता समझने लगा था। प्रगतिशील तथा समुन्नत जीवन की ओर अग्रसर होते हुए उसने अपने आवास की परिस्थितियों में भी सुधार किया। अब तक वह नदियों, कगारों, पर्वत कंदराओं में ही निवास करता था। अब उसने सुविधाजनक खुले स्थानों पर घांस-फूस, पेड़-पौधों और लकड़ी, मिट्टी, पत्थर की सहायता से अपने रहने के लिए छोटी-छोटी झोपड़ियों का निर्माण किया। मानव ने अपने हथियारों की दशा में भी परिवर्तन किया। यद्यपि अभी उसके शिकार के साधन लकड़ी, हड्डी तथा पाषाण के पुराने ही उपकरण थे। किंतु उनकी रुपरेखा में अब पर्याप्त सुधार हो चुका था। वह अधिक सुव्यवस्थित, सुविधाजनक और देखने में सुंदर थे। ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर पाषाण युग में मानव द्वारा काष्ठ उपयोग का प्रारंभ काल माना जा सकता है।

शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

संसार के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक खुदाई में पत्थर के अनगढ़ टुकड़े मिलते हैं। जिनका औजारों की तरह इस्तेमाल होता था और उनके साथ-साथ लकड़ी तथा हड्डी के डंडों का भी जो आम तौर पर नष्ट हो गए। सिंधु सभ्यता कालीन नगरों में घरों के निर्माण में लकड़ी का इस्तेमाल किया जाता था। बैलगाड़ियां व नावें भी लकड़ी से ही बनाई जाती थी। गृह निर्माण के लिए ईंटें नावों और बैलगाड़ियों से लाई जाती थीं। लकड़ी बड़ी-बड़ी नदियों के सहारे हिमालय से लाई जाती थीं। सिंधु के कारीगर निश्चय ही ऐसे कुल्हाड़ी और बसूले बनाने में समर्थ थे जिनमें लकड़ी के हत्थे डालने के लिए छेद बने होते थे।[2] वैदिक काल से आधुनिक काल तक की काष्ठ कला की उत्कृष्टता व प्राचीनता के संबंध में करली के बड़े चैत्यों में से एक के प्रवेश द्वार की चौखट पर जो कि भारतीय काष्ठ शिल्प कला का प्राचीनतम अवशेष है, पर उत्कीर्ण शिल्प से प्राचीन काष्ठ कला की उत्कृष्टता का अनुमान लगाया जा सकता है।[3]

इतिहास की दृष्टि से भाजा की गुफा महत्वपूर्ण है। इस गुफा के निर्माण में काष्ठ का प्रयोग हुआ है और इस प्रकार वह भारत की काष्ठ कला का अद्भुत उदाहरण है। काष्ठ का प्रयोग इसकी निर्माण शैली की विशेषता का द्योतक है। गुफा की छत-गज पृष्ठाकार है। छत की धरणें काष्ठ निर्मित हैं। इसी प्रकार कोण्डानी और बेडसा की गुफाओं में भी काष्ठ का अधिक प्रयोग किया गया है। प्राचीन भारत में आवागमन का प्रथम साधन संभवत: बैलगाड़ी ही रहा है। देश, काल, परिस्थितियों के बदलने और मानव ने जैसे-जैसे विकास की दिशा में अपने कदम बढ़ाये वैसे-वैसे आवागमन के साधनों में भी बदलाव आया और धीरे-धीरे चलने वाले आवागमन के साधनों के स्थान पर द्रुतगामी साधन सामने आए। यहां उल्लेखनीय है कि फ्रांस के कामटे डी सिबरी ने सन 1791 में सेतारे फेयर नामक साइकिल का आविष्कार किया। यह साइकिल केवल लकड़ी से ही बनाई गई थी। यह बहुत धीरे-धीरे चलती थी। इसके बाद फ्रांस तथा अन्य देशों के वैज्ञानिकों ने इसमें सुधार किया और अंत में आज वाली साइकिल का स्वरूप सामने आया।[4]

रामायण में स्थापत्य के क्षेत्र में रामायण कालीन आर्यों ने आश्चर्यजनक प्रगति कर ली थी। वाल्मीकि कृत रामायण में नगरों, दुर्गों और प्रासादों के वर्णन से यह स्पष्ट है कि स्थापत्य विज्ञान का एक व्यवस्थित एवं उन्नत रूप स्थिर हो चुका था। रामायण कालीन भारत में अन्य कलाओं के अतिरिक्त भवन निर्माण का कार्य भी चरमोत्कर्ष पर था। उस युग के भवनों की विधा के परिचायक काष्ठ प्रासाद, विमान आदि के विभिन्न भेदों का वर्णन

शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

रामायण में है। उस युग में सप्तभौम, अष्टभौम और सहस्त्र स्तंभ आदि विशिष्ट और विशाल काष्ठ राज भवनों के विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं। यह संभव है कि लंका पुरी के अधिकांश भवन काष्ठ निर्मित रहे होंगे, तभी हनुमान उनमें आग लगा देने में सहज सफल हो गए।

महाभारत कालीन संस्कृति भी वहां के अनेक प्रकार के शिल्पो में देखने को मिलती है। काष्ठ शिल्प, गृह शिल्प, वस्त्र उत्पादन, चर्म शिल्प, अस्थि शिल्प, दांत शिल्प, रथ नौकाओं तथा अन्य शिल्पों का निर्माण उस काल की शिल्पोन्नति और कलात्मक रुचि का परिचायक थे। उस युग में शिल्प तथा कला के क्षेत्र में जो भी कार्य हुआ उसका श्रेय ग्रीकों को दिया जा सकता है। ग्रीक जब भारत आए तो उन्होंने भवन निर्माण की ओर अपनी सक्रियता प्रदर्शित की। उच्च भवनों के निर्माण के लिए लकड़ी मिट्टी से कार्य लिया जाता था। दुर्योधन ने पांडवों के लिए जिस लाक्षागृह को बनाने का आदेश दिया था, वह मिट्टी लकड़ी का ही था।

अशोक कालीन चैत्य लकड़ी की निर्माण पद्धति से ही बनाए गए हैं। पाटलिपुत्र नगर के लकड़ी के परकोटे के भी कुछ अंश प्राप्त होते हैं। मिट्टी अथवा काष्ठ के खोल पर चर्म चढ़ाकर कई वाद्य यंत्रों का उपयोग भी होता था। अनुमानतः विवाह मंडप, चतुष्क आदि अस्थाई वास्तु कार्य थे। जहां विवाह आदि क्रियाएं संपन्न होती थी। विवाह मंडप एक प्रकार का चतुष्क था। जिसके चार पहल और चार द्वार थे। काष्ठ के आसनों, सिंहासनों, शैया, पलंगो आदि के अनेक प्रकारों का उल्लेख हुआ है। गुप्तकालीन वाहनों में पुरुषों के लिए काष्ठ रथ स्त्रियों के लिए काष्ठ कर्णी रथ और पालकी आदि प्रधान थे। काष्ठ निर्मित नौकाओं का भी उपयोग होता था। इसी काल में राजकीय गृह निर्माण और नदी घाटों पर सेतु बंध निर्माण में लकड़ी का उपयोग किया गया। कोस्मास के अनुसार गुप्त काल में सुगंधित वर्षों का निर्यात कल्याण के बंदर से होता था और चीनी तांग वंश के वृतांत के अनुसार भारतीय चंदन और केसर का निर्यात होता था।[5]

चंदन की लकड़ी की मूर्तियां भी बनती थी। भारतीय चंदन की बनी ऐसी ही एक बुद्ध मूर्ति 519 ईस्वी में फूनान नरेश रूद्रवर्मा ने चीनी सम्राट को भेजी थी। गुप्तकालीन साहित्य में समकालीन वाणिज्य के बांट, तौल आदि का भी उल्लेख हुआ है। तुला का उल्लेख कालिदास ने अनेक स्थानों पर किया है। इसी प्रकार मापने वाले काष्ठ दंड (मापदण्ड)का भी उल्लेख

शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

हुआ है। मनु के विधान के अनुसार वजन के बांटों और माप के काष्ठ है डंडों का भार, लंबाई आदि निश्चित कर मात्रा और मान के अनुसार उन पर अंकित भी किया जाता था। गुप्त काल के राजाओं में चंवर बहुत अच्छी लकड़ी से बने होते थे। जिन पर सोने चांदी की भूमि तैयार कर उसमें रंग-बिरंगे रत्न जड़ दिए जाते थे।[6]

हर्ष युगीन स्थापत्य तथा मूर्ति कला का विकास मंदिरों और मठों के रूप में हुआ। संभवतः उनमें से बहुसंख्यक मठ मंदिर लकड़ी तथा बांस के बने थे। जो की अल्पकाल में ही नष्ट हो गए। जिनका कोई चिन्ह शेष न रहा। इस संभावना की इसलिए भी पुष्टि होती है कि व्हेन सांग ने प्रयाग में आयोजित हर्ष के छठे पंचवर्षीय दान महोत्सव के जिस विशाल मंडप तथा उसके पृथक पृथक विश्राम गृहों का उल्लेख किया है, वे सब काष्ठ तथा बांस के थे। हर्ष के समय प्रस्तर, काष्ठ, बांस के अतिरिक्त धातु और वस्त्रों के माध्यम से शिल्प की सर्वथा नई विधाओं का विकास हुआ।

जनजाति काष्ठ कला के प्रारंभिक साक्ष्य मौजूद न होने के कारण यह कहना कठिन है की जनजातियों के सांस्कृतिक परिवेश में तथा कास्ट शिल्प कला में क्या ऐतिहासिक सामंजस्य है। हमारे आदिम शिल्पियों ने औजारों द्वारा काष्ठ में विविध आकृतियां उकेर कर काष्ठ शिल्प कला को नए आयाम दिए। उनमें सर्वाधिक प्रभावशाली वह गोलाकार छत रही होगी जिसमें लकड़ी की बारीक बारीक नक्काशी दर छड़ियों को पास-पास जोड़कर सुंदर गोल आकार प्रदान किया गया। संभवतः काष्ठ का उपयोग आदिमानव ने पशुओं के भय, बरसात तथा भीषण वायु से अपनी रक्षा हेतु रक्षा गृह बनाने में किया होगा। इसलिए आज भी घर बनाने में काष्ठ का इस्तेमाल किया जाता है। पूरा विद्वानों का कथन है कि मनुष्य अपनी सुरक्षा के लिए सर्वप्रथम पहाड़ों की गुफाओं में रहा होगा। गुफाओं में सहस्त्र वर्ष व्यतीत करने के बाद जब वह भोजन के लिए जंगली जानवरों के शिकार तथा वन उपज संग्रहण के लिए वनों की ओर आए होंगे तब उन्होंने वृक्षों की शाखाओं पर अस्थाई आवास बनाने की परंपरा का श्री गणेश किया होगा। पेड़ की शाखाओं एवं पत्तियों से उन्होंने तिकोनी आवासीय झोपड़ियों का निर्माण किया होगा। जैसे बिहार, उड़ीसा की बिरहोर जनजाति ने किया था। इसके बाद ही धीरे-धीरे लंबी, मोटी अर्द्ध स्थाई निवास बनाए होंगे और तब शाखाओं और डालियों के स्थान पर लंबी, मोटी लड़कियों का उपयोग घर बनाने में किया होगा। निवासों को सुसज्जित व कलात्मक बनाने की परंपरा का प्रादुर्भाव मनुष्य के घर की कल्पना साकार होने पर ही संभव हुई होगी।[7]

शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहुविषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Impact Factor – SJIF 2024 = 3.621
Year -1
Vol -8
June
2024

मनुष्य की आवास समस्या सुलझ जाने के बाद उसने अपना पूरा ध्यान कलाओं के विकास में लगाया होगा। भौतिक सुखों के आगे भी बहुत कुछ सोचने का अवसर मनुष्य को मिला। उसने इतिहास, दर्शन , साहित्य, संगीत, कला के और नए आयाम की खोज की। श्रम से उत्पन्न हुई कलाओं में एक शिल्प कला भी है। यूरोप में यह अवधारणा है कि पृथ्वी पर सिर्फ कला दूसरे ग्रह की परियों द्वारा पहुंची। पृथ्वी पर परियां उतरी और उन्होंने पृथ्वी की महिलाओं को शिल्प कला का ज्ञान दिया और आकाश लोक में चली गईं। यूनानी मिथकों के अनुसार प्रोमीथियस लोगों के लिए सर्वप्रथम आग लाया और उसी ने लोगों को शिल्पों का रहस्य बताया। मध्य प्रदेश की गोंड जनजाति के प्रथम देवता लिंगोंपेन ने उन्हें 18 वाद्य दिए हैं लिंगोपेन ने ही उन्हें शिल्प गढ़ना भी सिखाया। भारतीय आख्यान में ब्रह्मा को सृष्टि का रचयिता और विश्वकर्मा को सभी स्थापत्य शिल्पों का जनक माना गया है।[8]

शिल्पी कभी भी किसी भी समय पृथ्वी पर अवतरित हुए हो लेकिन शिल्प मनुष्य की अद्वितीय रचना शक्ति का प्रमाण है। शिल्प में देश काल परिस्थिति के चिन्ह आवश्य मौजूद होते हैं। मनुष्य के शिल्प सृजन को प्रकृति का द्वितीय रूप कहा जा सकता है। मनुष्य ने अपनी कल्पना, विवेक और श्रम के द्वारा मिट्टी, पत्थर,हड्डी, काष्ठ, धातु, चर्म आदि से द्वार, मंडप, खिड़की, मूर्ति, मुखौटे, तीर, धनुष, पशु-पक्षी, आकृति, खिलौने, भवन, मंदिर, पुल और किलों तक का निर्माण कर लिया। उसने अपने विकास के साथ पृथ्वी को और अधिक सुंदर कलात्मक और स्वर्गिक बनाने की कोशिश की। जनजातीय शिल्प पर समय का प्रभाव धीरे-धीरे होता है इसलिए उनके शिल्पों में अभी भी आदिम ऊर्जा के दर्शन होते हैं।

संदर्भ

1. दुबे डॉ श्यामाचरण, मानव और संस्कृति, 1982 पृष्ठ 160-161.
2. गौरोला वाचस्पति, भारतीय संस्कृति और कला 1985 पृ.75.
3. कोसम्बी धर्मानन्द दामोदर, प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता पृ.44
4. गौरोला वाचस्पति, भारतीय संस्कृति और कला 1985 पृ 199.
5. उपाध्याय भगवत शरण, गुप्तकाल का सांस्कृतिक इतिहास पृ. 163.
6. मिश्र डॉ इन्दुमति, प्रतिमा विज्ञान 1987 पृ. 57-60
7. शरण त्रिपुरारी, वैशाली महोत्सव स्मारिका 1987 पृ. 52
8. जगदलपुरी लाला, बस्तर का इतिहास एवं संस्कृति पृ.242.